संपादकीय

इस संपादकीय के साथ आपकी यह पत्रिका 'ककसाड़' अपने पांचवें वर्ष में प्रवेश कर रही है। यह लिखते हुए बीते पांच सालों की संघर्ष यात्रा के सारे उतार-चढ़ाव और पड़ाव एक चलचित्र की भांति मेरी आखों के सामने से गुजर रहे हैं। वो घड़ी जब ककसाड़ का पहला अंक छप कर आया था, तो किस तरह लरजते हाथों में एक नवजात शिशु की भांति नरमी और सावधानी से उसे थामा था। उसके ताजा कागज की वह खुशबू आज भी दिलो-दिमाग में बसी है। इसके बाद के चार सालों में इस पत्रिका ने लगभग उन सारी समस्याओं का सामना कर लिया है, जो एक पत्रिका के प्रकाशन में आ सकती हैं। इसे न तो निरंतर विज्ञापन की प्राणवायु के स्रोत मिल पाए और न अन्य कोई आर्थिक अवलंबन। सो इन हालातों में मासिक पत्रिका की निरंतरता बनाए रखना सबसे दुष्कर कार्य होता है। इन सबके बावजूद इस पत्रिका का अबाध गति से निकलना और हर नए अंक के साथ निखरते जाना; दरअसल 'टीम ककसाड़' और प्रकाशक के अटूट हौसलों, अव्यावहारिक जिद्द और जुनून के साथ ही आप जैसे सुधी पाठकों, रचनाकार साथियों से मिले संबल और स्नेह का फल है। शुरुआत में तो इस पत्रिका के नाम को ही लेकर कई साथियों ने कहा, भाई यह क्या अजब-गजब सा नाम है। न जुबां पे चढ़ता है ना दिमाग में कुछ आता है। पर अब धीरे-धीरे इसका नमक जुबान को भाने लगा है और दिमाग को भी जंचने लगा है। और इन्हीं पाथेय के सहारे और अनगिनत बाधाओं को पार करके खरामा-खरामा 'ककसाड़' पत्रिका कब पांचवें साल की दहलीज पर पहुंच गई पता भी न चला। इस बीच संतोष तथा सम्मान के भी कई अवसर इसने हमें दिए हैं जब इसे देश की सर्वोच्च पंचायत 'संसद' के वाचनालय में गरिमामय स्थान मिला तथा भारत सरकार के संस्कृति मंत्रालय द्वारा सम्मानित व पुरस्कृत किया गया। इस सबसे ऊपर आप जैसे सुधी पाठकों के हौसला बढ़ाते, प्रशंसा पत्र जब हमारी पीठ थपथपाते हैं, तब हमें लगता है, हां हमारा निर्णय सही था और हम सही रास्ते पर चल रहे हैं। अनेक संघर्षों के बीच इस पत्रिका ने धीरे-धीरे हिंदी पट्टी के साथ अन्य भाषा-भाषी प्रदेश जैसे कर्नाटक, ओड़िसा, बंगाल, गुजरात, महाराष्ट्र और उत्तर पूर्वी राज्यों में पैठ बनाई है। इसे मराठी, अंग्रेजी व अन्य क्षेत्रीय भाषाओं में भी प्रकाशित करने की प्रबल मांग भी सामने आई है, जो शनैः शनैः इसकी उपादेयता को सिद्ध कर रही है। इस दिशा में हम गंभीरता से विचार कर रहे हैं और हमारा विश्वास है कि उचित समय काल और परिस्थितियों में यह पत्रिका निश्चित रूप से अपने विराट स्वरूप को प्राप्त होगी।

साक्षात्कार

चित्रकार होना कोई कॉलेज की डिग्री नहीं लगन है

गोंड परधान कलाकार **अनसुइया उइके श्याम** से **कुसुमलता सिंह** की बातचीत

अनसुइया उइके गोंड जाति के परधान समुदाय से आती हैं और अनुपपुर म.प्र. में रहती हैं।यह बचपन से ही चित्र बनाती थीं पर उसे कभी सहेजा नहीं। इन्होंने 2001 में अपनी पहली कलाकृति जो सहेजकर रख पाईं वह प्राकृतिक रंगों से कपड़े के टुकड़े पर बनाई और आज कपड़े पर, कागज के कैनवस पर समान रूप से चित्र बनाती हैं। पिछले एक दशक से म.प्र. के जनजातीय गोंड कला क्षेत्र में इनका जानामाना नाम है। इनसे बात करना मेरे लिए अद्‌भुत अनुभव था।

प्र. आप अपने चित्र बनाने के लिए किस विषय को चुनती हैं?

उ. मैडम जी, हम यह सब कुछ सोचते नहीं हैं घर के काम करते रहते हैं उसमें ही चित्र और रंग सब सूझने लगता है। जब थोड़ा समय मिला तो बना लेते हैं। हमें तो खाना बनाना, सब्जी काटना भी चित्र बनाने जैसा लगता है। कभी-कभी हमारी सब्जी भी उसी तरह से कट जाती है।

प्र. आप कैसे चित्रकारी करती हैं? मेरा मतलब कि इसके लिए क्या-क्या तैयारी करनी होती है?

उ. पहले तो हम दीवाल पर चित्र बनाते थे तो तैयारी रंग की करनी होती थी। कहां से हरा रंग बनाएं कैसे गेरू से लाल रंग बनाएं। अब तो कपड़े, दुपट्टे , कागज के कैनवस सब पर हम चित्र बनाते हैं कुछ रंग बाजार से और कुछ प्राकृतिक रंग बनाकर लगाते हैं।

प्र. कौन से रंग अच्छे लगते हैं आपको?

उ. जो रंग बाजार में आसानी से मिल जाए। पर हमें बैंगनी, हरा, लाल, पीला रंग अच्छा लगता है। जो रंग हम अपनी पूजा में ज्यादा लगाते हैं वही रंग।

प्र. अपनी कला की इस यात्रा के बारे में कि कैसे आप यहां तक पहुंची, कुछ बताएं?

उ. हमारे परिवार में हमारी पूजा में सब चित्र बनाते हैं। तो उसमें ही यह सब बात होती है कि कौन अच्छा चित्र बनाता है। तो हमको लगता था कि हमारा चित्र भी अच्छा बने। हम जनगढ़ श्याम के परिवार से हैं उनका गोंड कला में इतना नाम है। तो हमसे भी जब कोई कहता था कि तुम उनके परिवार की हो तुम चित्र नहीं बनाती, हमें लगता कि हम बनाते तो हैं पर दिखाने के लिए कुछ नहीं है। हमने अपने पति से कहा जो गाड़ी चलाते हैं, ड्राइवर हैं तो उन्होंने कपड़े पर बनाने की सलाह दी और हम बनाने लगे। ऐसे ही हम यहां तक पहुंचे। जब कागज पर बनाने लगे तो कुछ लोग और कई मैडम आईं तो हमारा बनाया चित्र खरीदकर ले गईं। मैं यहां से कहीं बाहर नहीं गई। हां मेरे चित्र लोग ले जाते हैं कि यहां प्रदर्शनी लग रही है वहां प्रदर्शनी लग रही है उसमें रखेंगे। बाद में जो बिक जाता है उसके पैसे दे जाते हैं।

प्र. इन दिनों आप इंदिरा गांधी राष्ट्रीय आदिवासी विश्वविद्यालय अमरकंटक में चित्रकारिता कर रही हैं?

उ. जी, हमें वहां पर दीवालों को सजाने का काम मिला है। मैं उसके लिए जाती हूं । अब कहीं न कहीं चित्र बनाने का काम मिलता रहता है।

प्र. आपका चित्रकार के रूप में इतना नाम है तो अपके बच्चों को यह सब कैसा लगता है?

अनसुइया उइके श्याम
पता- पत्नी विनोद कुमार उइके
वार्ड नं.09, ग्राम भमरिया, पो.-
जोहिलाबोध, जुहिला, अनूपपुर
म.प्र. 484886
मो. 09926544846

कुसुमलता सिंह
प्रबंध संपादक 'ककसाड़'
मो. 099682-88050